ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(12): 218-221
www.allresearchjournal.com
Received: 04-10-2017
Accepted: 05-11-2017

अर्चना द्विवेदी
अतिथि विद्वान, हिन्दी विभाग
शासकीय शहीद केदारनाथ
स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मऊगंज
जिला रीवा (म.प्र.)

Correspondence
अर्चना द्विवेदी
अतिथि विद्वान, हिन्दी विभाग
शासकीय शहीद केदारनाथ
स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मऊगंज
जिला रीवा (म.प्र.)

अमोल बटरोही के काव्य में सांसारिक जीवन के विविध चित्र का अध्ययन

अर्चना द्विवेदी

सारांश
प्रस्तुत शोध पत्र अमोल बटरोही के काव्य में सांसारिक जीवन के विविध चित्र का अध्ययन पर आधारित है। समाज, राजनीति, अर्थ, संस्कृति एवं चरित्र यही आज के जीवन के पंचतत्व हैं। इन्हीं से वर्तमान जीवन पद्धति निर्मित एवं गतिमान है। और जब इन्हीं में धुन लग जाय तो जीवन ही क्या, सम्पूर्ण राष्ट्र जर्जर हो जायेगा। वह जीता तो रहेगा किन्तु भीतर से खोखला होकर। वर्तमान युग में सामाजिक विद्रूपता के अनेक यथार्थ दृश्य प्रस्तुत करने वाले रचनाकारों में रामदास पयासी, सैफू, शंभू, गुलाम गौस, डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल, रामलखन शर्मा 'निर्मल', शिवशंकर मिश्र 'सरस' तथा आर.जी. विकल आदि प्रमुख हैं। बेमेल विवाह, बाल विवाह, दहेज प्रथा, विधवा विवाह, छुआछूत, वर्गभेद, अशिक्षा आदि प्रमुख रूप से सामाजिक विद्रूपता के अन्तर्गत आते हैं। मानव जीवन संकीर्णताओं एवं विद्रूपताओं के कारण अदना हो गया है, साथ ही उसका परिवेश भी संकीर्ण हो गया है। 'अमोल बटरोही' 1967 से प्रारम्भ कर 1995 तक में निरन्तर अपने काव्य एवं शिल्प में विकास करते चले गये हैं। ठेठ बघेली शब्दों एवं विशुद्ध ग्रामीण परिवेश में नूतन बिम्ब प्रतीकों की स्थापना करते हुए उन्होंने बघेली–माटी की सोंधी महक विश्व में बिखेरने का अभिनव प्रयास किया है। कथ्य एवं शिल्प में वैविध्य की दृष्टि से उनका वाड.मय विराट है। बोधगम्य होने के कारण उनकी कविताएँ बघेलखण्ड–अंचल में अत्यन्त लोकप्रिय हैं। उनके काव्य की थाती राष्ट्र द्वारा संरक्षणीय एवं संवहनीय है।

मूल शब्द : अमोल बटरोही, काव्य, सांसारिक जीवन, विविध चित्र

प्रस्तावना :
बघेलों के इतिहास का पल्लवन वैदिक सभ्यता और संस्कृति से हुआ है। भृगुपुत्र शुक्र दैतय याजक था। शुक्र की पुत्री देवयानी ययाति को ब्याही थी। देवयानी से यदु और तुर्वशु दो पुत्र पैदा हुए। जीवन के अंतिम पड़ाव में ययाति ने अपना राज्य पुत्रों के बीच बाँटकर भृगु श्रृँग पर तपस्या करने चले गये। महाराज ययाति चौदह दीपों के स्वामी थे। उन्होंने अपना राज्य इस प्रकार अपने पुत्रों में बाँट दिया। दक्षिण–पूर्व के भूभाग का राज्य तुर्वशु को दिया। यहाँ आजकल रीवा रियासत है।''[1]
बघेलखण्ड और रीवा रियासत परस्पर पर्यायवाची से है। शिवसंहिता में इस भूखण्ड का उल्लेख 'वरुणांचल' नाम से है। इसे शेषावतार लक्ष्मण की राजधानी माना गया है। इस अंचल में लक्ष्मण की उपासना लोकप्रिय है। सीधी–शहडोल के गोंड आदिवासियों में 'लछिमन–जती' का कथानक बहुप्रचलित है। वनवास काल में इस अंचल में राम, लक्ष्मण और सीता को कुछ काल के लिए निवास करना पड़ा था।
पाली शहडोल जिला अन्तर्गत एक गाँव है। ''बघेलखण्ड के इतिहास के केन्द्र में बान्धवगढ़ है। बान्धवगढ़ रीवा राज्य का सुदृढ़ एवं दुर्गम दुर्ग है। यह दुर्ग सागर सतह से 2664 फीट ऊँचे पर्वत पर स्थित है। पुरातत्व की दृष्टि से भी इसका वैशिष्ट्य उजागर है। बघेल शासकों के पूर्ववर्ती नरेशों के लिए यह महत्वपूर्ण दुर्ग था। तेरहवीं शताब्दी में महाराज कर्णदेव को यह किला कलचुरि नरेश से दहेज के रूप में प्राप्त हुआ था। बघेलों के समृद्धि के केन्द्र बान्धवगढ़ ने अनेक युद्धों को देखा। सन् 1498–99 में सिकन्दर लोदी ने तत्कालीन शासक से अप्रसन्न होकर इस पर आक्रमण किया था। लेकिन असफलता उसे ही मिली। कहा जाता है कि अकबर जन्म यहीं पर हुआ था।''[2]
प्राचीन ग्रंथों में बघेलखण्ड का नाम 'करुष' मिलता है। करुष का शाब्दिक अर्थ 'क्षुधा' होता है। बघेली लोकजीवन अभावों और संकटों से त्रस्त रहा। अतः करुष (क्षुधा) नामकरण की सार्थकता सिद्ध होती है। जनश्रुति है कि करुष नाम इन्द्र ने दिया था। डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल ने 'भारत सावित्री' नामक पुस्तक में उपरोक्त कथन की पुष्टि की है – ''बघेलखण्ड का बड़ा भूभाग 'करुष' जनपद था, जहाँ अनेक जंगली जातियाँ पहले और आज भी बसती है।''[3]

विन्ध्य पृष्ठाश्रयी जनपद बघेलखण्ड के एक छोर में आम्रकूट (अमरकंटक) और दूसरे छोर में चित्रकूट अवस्थित है। ग्रामीण सभ्यता और संस्कृति वाला यह जनपद अपनी मित्रता के साथ पर्वतमालाओं से आवेष्ठित है। इसके उत्तर में इलाहाबाद, पूर्व सीमा में छत्तीसगढ़ की रियासत और मिर्जापुर के कुछ जिले हैं। पश्चिम में जबलपुर तथा दक्षिण में मण्डला व बिलासपुर स्थित है। कहा जाता है कि 'विलाया' नाम की मल्लाहिन ने 'विलासिया' गाँव बसाया था। बघेल राजा विलासा देव ने इस गाँव को शहर के रूप में विकसित कर बिलासपुर नाम दे दिया। विलास देव (लगभग वि.सं. 1300–1325) बघेलवंश की पाँचवीं पीढ़ी में आते हैं कोठी, सोहावल, मैहर, बरौधा, जसो और नागौद की रियासतें बघेलखण्ड की परिधि में आती है। प्रशासनिक दृष्टि से बघेलखण्ड के अन्तर्गत रीवा, सतना, सीधी, शहडोल, उमरिया, अनूपपुर और सिंगरौली जिले आते हैं। इलाहाबाद से प्रकाशित साप्ताहिक बघेली 'प्रउत' में छपे मानचित्र के अनुसार बघेलखण्ड के अन्तर्गत सोनभद्र, इलाहाबाद, रीवा, सीधी, सतना, शहडोल, जबलपुर, मण्डला, सिवनी और नरसिंहपुर प्रखण्ड आते हैं। इस जनपद की सभ्यता–कौशाम्बी, मातृभाषा–बघेली, लिपि–श्री हर्ष लिपि हैं। व्याघ्रदेव बघेल वंश के मूल पुरुष है।

बाह्याडंबर

साहित्य जीवन की आलोचना है, चाहे वह निबंध के रूप में हो, चाहे कहानियों के चाहे काव्य के रूप में उसे व्यक्ति के जीवन की आलोचना और व्याख्या करनी चाहिए। साहित्यकार समाज का एक सजग प्रहरी होता है जो अपने चारों ओर की उन परिस्थितियों को देखता है जिसमें वह जी रहा है, या जिसे भोग रहा है। उन्हीं परिस्थितियों के भीतर से जीवन की सच्चाई को प्रगट करना, पाठकों एवं समाज के लोगों को उसका एहसास कराना ही साहित्यकार का धर्म है। वर्तमान युग में साहित्य का उद्देश्य मात्र मनोरंजन करना नहीं रह गया है, और न ही नायक–नायिका की कहानी सुनाना है। आज वही साहित्य मान्य एवं ग्रहणीय है, जो जीवन की वास्तविक समस्याओं, विद्रूपताओं पर भी विचार करता है, और उन्हें हल करता है। जिस साहित्य में उत्कृष्टता की वर्तमान कसौटी पर अनुभूति की तीव्रता हो, जो हमारे भावों और विचारों में गति पैदा करता है, वही साहित्य उत्कृष्ट माना जाता है। समाज की जो विद्रूप परिस्थितियाँ हैं, जो कुछ भी अभद्र है, असुन्दर है, साहित्यकार उन पर अपनी पूरी शक्ति से बार करता है। दलित, पीड़ित एवं वंचित व्यक्तियों एवं समूहों की वकालत करना उसका महान कर्तव्य है।

वर्तमान हिन्दी साहित्य में उपर्युक्त तथ्य विपुल मात्रा में पाये जाते हैं। बघेली के आंचलिक कवियों ने भी अपने अंचल एवं समाज की समस्याओं एवं विद्रूपताओं का निदर्शन किया है। आज हमारा देश तथा देश के नेता, शुभ–चिन्तक इक्कीसवीं सदी में पहुँच रहे हैं, तब भी भारत में ऐसे अनेक अंचल हैं, जहाँ के लोग आजादी का अर्थ नहीं समझ सके हैं। जहाँ आज भी शोषण, अशिक्षा, अत्याचार एवं उत्पीड़न ''घर जँबाई'' की तरह रमा हुआ है। अगर कुछ परिवर्तन दिखाई दे रहा है, तो वह है सांस्कृतिक पतन। फिरंगियों से तो उन्हें आजादी मिल गयी किन्तु समाज के ठेकेदारों ने उन्हें अभी भी पूरी तरह गुलामी में जकड़ रखा है। इन्हीं विद्रूपताओं का यथार्थ दृश्य बघेली कवियों ने अपने साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है। जहाँ मार्मिकता, यथार्थता एवं कुरूपता पाई जाती है। अनेक रचनाकारों ने इस व्यवस्था पर तीखा प्रहार किया है।

वर्तमान युग संघर्ष एवं स्पर्धा का युग है। समाज, राजनीति, शिक्षा, व्यवसाय, नौकरी आदि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्पर्धा करनी पड़ती है, तभी लोग किसी प्रकार जीवन यापन कर पाते हैं। किन्तु वर्तमान युवा पीढ़ी परिश्रम एवं स्पर्धा से डरकर उससे कोसों दूर जा रही है। उसमें स्पर्धा, संघर्ष एवं 'मेहनत' के स्थान पर कुण्ठा, निराशा तथा रुग्ण मानसिकता समाहित हो गई है। इस स्थिति का चित्रण करना भी समकालीन साहित्य एवं साहित्यकार का उत्तरदायित्व है। यह कुण्ठा एवं निराशा अधिकांशतः आजादी के दूसरे दशक से दिखाई देती है। अतः तत्कालीन कवियों ने इस स्थिति का भरपूर चित्रण किया है।

बघेली के आधुनिक कवियों ने इस विषय पर अधिक दृष्टि डाली है। जिनमें से सुदामा ''शरद'', सुदामा मिश्र, कालिका त्रिपाठी, रामाधार शुक्ल, विजय सिंह परिहार, मैथिली शरण शुक्ल, श्रीनिवास शुक्ल ''सरस'', बाबूलाल दाहिया, आर.जी. पाण्डेय ''विकल'', डॉ. अमोल बटरोही आदि प्रमुख हैं।

साहित्यकार हो या शिल्पी, उसकी कला तब तक मूल्यवान नहीं होती, जब तक वह यथार्थ के धरातल पर उतर कर अपने चारों ओर के समस्त वातावरण को समेट कर अपनी साहित्य या कला में अभिप्रमाणित न करें। भारतीय समाज में शोषण की परम्परा राजतंत्र युग से चली आ रही है। वर्तमान युग में शासन के अनेक प्रयासों के बावजूद यह प्रक्रिया समाप्त नहीं हो सकी। गरीब एवं निरीह जनता का शोषण होता रहा है, और आज भी हो रहा है। नेता, मंत्री, प्रशासनिक अधिकारी, कर्मचारी सभी ने उन्हें अपना शिकार बनाया है। जनता आज भी उत्पीड़ित है। इस यथार्थ का वर्णन एवं विरोध करना हर सजग साहित्यकार का धर्म है। जिसका निर्वाहन विन्ध्य के आंचलिक कवियों ने पूर्ण कर्मठता से किया है।

इसी तरह एक हलवाहा अपने शोषण पर जमींदार किसान से अपने हिस्से की मिन्नत करता है। अपनी मेहनत और हक दोनों को स्पष्ट करता हुआ कहता है कि मेरी पूरी कमाई पर कम से कम आधा हिस्सा तो मुझे मिलना चाहिए। [4]

बघेली लोक कवियों में समकालीन राजनीतिक व्यवस्था एवं परिस्थितियों पर भी विहंगम दृष्टि डाली है। किसी भी साहित्य पर तत्कालीन राजनैतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक होता है, अथवा यह कहा जाय कि साहित्य हर तरह की व्यवस्था में लगाम का कार्य करता है। यह बात राजनीति में भी होती है। बघेली कवियों ने समकालीन राजनैतिक व्यवस्था एवं परिस्थितियों पर विहंगम दृष्टि डाली है, तथा जहाँ कहीं व्यवस्था में कमी पायी है वहाँ अपने साहित्य शास्त्र में तीखा प्रहार किया है। [5]

वर्तमान व्यवस्था एवं उसकी कमियों पर भी इन कवियों ने अपनी कलम चलाई है। आज जो बड़े कहे जाने वाले लोग हैं उन्हीं के हाँथों में राजनीति है, उन्हीं का प्रशासन है, और वही जनता का शोषण कर रहे हैं। उन्हें इतना ध्यान नहीं है कि देश की आमदनी में छोटे–बड़े सब का बराबर हक है, तथा उसका हिस्सा भी सबको मिलना चाहिए। इस व्यवस्था पर तीखा व्यंग्य करते हुए डॉ. अमोल ''बटरोही'' ने लिखा है कि –

''पेटै ता उहौ आय, जऊ छोट का हबै,
जब बड़कबा भरै, ता कबौ छोटकबौ भरै।
तसली है ठंठनानि परी, गोलॅहथी बिना,
चाउर सरा गोदाम मा बकतत परा हबै।
बटरोही बिलारिन के, अकिलि मा परा पथरा,
पलरा लिहे बॅदरऊ कहौं, आय न परैं।''[6]

कुण्ठा एवं मानसिक रूग्णता के साथ–साथ आधुनिक युग में व्यक्ति एवं समाज का नैतिक पतन भी होता जा रहा है। व्यक्ति ईमानदार एवं निष्ठावान नहीं दिखाई पड़ रहा है। विन्ध्य के आंचलिक कवियों ने समाज की इस दशा का भी चित्रण किया है, तथा पाठकों एवं समाज के लोगों को उनके यथार्थ का दर्शन कराया है।

आर्थिक विपन्नता

आज की व्यवस्था में शोषणकर्ताओं की पूरी जमात उपस्थित है, पुलिस, पटवारी, पेशकार, सरपंच, गाँव का जागीरदार, नेता, मंत्री

सभी जनता की जेब पर हमला बोल रहे हैं। आर्थिक शोषण के अतिरिक्त मानसिक एवं शारीरिक शोषण की भी इस क्षेत्र में कमी नहीं है। इसके अनेक यथार्थ, दृश्यों का चित्रण इन कवियों ने चित्रित किया है। इसके सर्वसशक्त हस्ताक्षर अमोल ''बटरोही'' हैं। दिन भर खेतों में काम करने वाली मजदूरनी संध्या के समय ठाकुर की खलिहान में मजदूरी लेने जाती है, उस समय ठाकुर उसकी लाज तक लूट लेता है, डॉ. बटरोही के काव्य में यह दृश्य जीवन्त हो सका है। [7]

भारतीय मन्दिरों में जहाँ त्रिकाल संध्या का विधान है, प्राचीन काल से ही मन्दिरों में पूजा–पाठ, यज्ञ एवं दान जैसे पवित्र कार्यों से लोगों को सद्भाव एवं संस्कृति की शिक्षा दी जाती है, वहाँ अब शराबियों, कबावियों एवं जुआड़ियों का जमघट रहता है।

इसी प्रसंग में कवि जीव जगत की आर्थिक विपन्नता का वास्तविक चरित्रांकन करते हुए लिखता है। कवि के लेखन में यथार्थोन्मुखी सक्रियता देखने को मिलती है।

ग्रामीण एवं पारिवारिक जीवन की छबियाँ

शादी ब्याह के अवसर पर अनेक परम्पराएँ बघेलखण्ड के समाज में प्रचलित हैं, जिनका सामाजिक एवं सांस्कृतिक महत्व है। उनमें से एक परम्परा है – जब प्रथम बार बहू ससुराल आती है, उस समय परछन होता है। उसके बाद वह आगे–आगे गृह प्रवेश करती है तथा पति उसके पीछे चलता है, पत्नी ''टिकरी पर पाँव'' रखती है, पति उसे उठाता है, फिर ''कोहवर'' में दोनों प्रवेश करते हैं, वहाँ पति बरतन में अनाज भरता है, पत्नी लात मार कर उसे गिरा देती है, यह क्रिया अनेक बार होती है। इसका सांस्कृतिक महत्व बताते हैं। [8]

डॉ. अमोल बटरोही ने अपने ग्रामीण व पारिवरिक जीवन की छबियों का उल्लेख करते हुए, यह स्पष्ट किया है कि भारत की संस्कृति अपने गाँव की धरोहर है। इनकी ग्रामीण एवं पारिवारिक जीवन की छवियाँ अनेक प्रकार से शिक्षा प्रद हैं। [9]

आज समाज में जो विकृति दिखाई दे रही है, उसका मुख्य कारण अनुभवशील लोगों का न बोलना है। अच्छे लोग यदि प्रभावपूर्ण ढंग से ग्रामीण एवं पारिवारिक जीवन की छवियों के बारे में पहल करने लगें तो समाज में पड़ने वाले लांछन से समाज मुक्त हो सकता है। 'हम बोलब' शीर्षक कविता के अन्तर्गत डॉ. बटरोही ने ग्रामीण परिवेश की विसंगतियों को लक्ष्य कर कहा है कि मैं जब तक जीऊँगा तब तक ग्रामीण बोध की कविता लिखूँगा।

सम्यक अध्ययनोपरान्त निष्कर्षतः यह कहना प्रसंगानुकूल होगा कि डॉ. अमोल बटरोही एक ऐसे बघेली रचनाकार हैं, जो निडर होकर अपनी स्पष्ट बात करते हैं। ''विकास की बड़ी–बड़ी पुस्तकें भले ही कितनी छप गयी हों पर झोपड़ी तो आज भी केवल विकास कथा सुनकर रह गयी, उसका विकास कहीं हुआ? लोग काजू खाता देख रहे हैं परन्तु टिप्पणी नहीं करते कि हमें चाय भर ही मिल जाय। डर के मारे जीभ नहीं खोलते पर क्या अन्याय सहना अच्छा है? बाड़े में सियार घुस आया है कोई रखवाला हो तो कुत्ते को आवाज दे। जब आवश्यकता पड़ती है तो जीभ जम आती है नहीं तो दूसरे के लिए बोलकर कौन जाल में फँसे? पर बटरोही तो सभी के लिए लड़ने को तैयार हैं भले ही उसे कितना ही कष्ट उठाना पड़े।'' [10]

नारी जीवन की विविध स्थितियाँ

डॉ. अमोल बटरोही का कविमन नारी की कोमलता एवं समर्पण की प्रवृत्ति से अभिभूत है। उनमें नारी के प्रति प्रेम की महान आस्था है। वस्तुतः कवि नारी में साहस का हिमालय एवं करुणा का महासागर देखता है। सृष्टि के समस्त बोध उसे नारी जीवन में दिखाई देता है। यथा – निरक्षरता राष्ट्र के लिए एक कलंक है। आज पूरा राष्ट्र निरक्षरों को साक्षर बनाने में लगा है।

भारत में इस्लाम संस्कृति के आगमन के फलस्वरूप हमारे समाज में नारियों की जो दुर्दशा हुई, वह बड़ी करुण एवं निन्दनीय कही जा सकती है। नारी शिक्षा पर प्रतिबंध बाल–विवाह प्रथा का प्रारम्भ इसी युग की देन है। देश की स्वतंत्रता के बाद भी ये दोनों परम्पराएँ भारतीय अंचलों में विद्यमान हैं और तत्कालीन प्रबुद्ध कहे जाने वाले लोग भी उसे समर्थन देते रहे हैं। छुआछूत एवं जाति प्रथा के अतिरिक्त अन्य अनेक रूढ़ियाँ भी हमारे समाज में व्याप्त हैं, जिनकी विवृत्ति आँचलिक कवियों द्वारा की गई है। [11]

डॉ. बटरोही देश के नागरिकों से निवेदन करते हैं कि ''जननी–जन्मभूमि स्वर्ग से भी बड़ी है'' इसलिये हम सब को मातृभूमि के लिये अपने प्राण तक देने में संकोच न होना चाहिये। बघेलखण्ड की माताएँ बचपन से ही अपने बालकों में राष्ट्रीय भाव कूट–कूट कर कैसे भर देती हैं। देखिये मैथिली शरण शुक्ल की निम्न पंक्तियाँ जिसमें लोरी गाती हुई माँ पलना में लिटाये हुए बालक को देश की रक्षा के लिये ही पाल रही हैं। डॉ. अमोल बटरोही के काव्य में नारी जीवन की विविध स्थितियाँ बड़े ही मनोहारी ढंग से प्रस्तुत हैं। सभी के उदाहरण इसमें भले ही प्रस्तुत किये न जा सके हों, किन्तु मैं इतना अवश्य कह सकती हूँ कि अमोल बटरोही जी की रचनाओं में जिन नारी विषयक निजत्व का भाव बोध व्यक्त हुआ है, वह अन्यत्र देखने को नहीं मिलता।

निष्कर्ष

इसी प्रकार अमोल बटरोही बघेली की परम्परा को तलासने और तरासने का प्रयास में जुड़े हैं। उपर्युक्त विवेचन के फलस्वरूप निष्कर्षतः मैं यह कह सकती हूँ कि अमोल जी की कविताएँ बहुत सपाट और दो टके होती हैं। उनकी कविताओं में अगर मगर की गुंजाईस नहीं होती। यथार्थ के विभिन्न स्वर उनके काव्य में अनायास अर्न्तप्रवाहित है, जो बघेली की ताकत को अभिव्यंजित करते हैं।

डॉ. अमोल बटरोही ''बघेली'' के प्रगतिवादी काव्य धारा से प्रभावित सिद्ध हस्त कवि हैं। उन्होंने अपने गीत के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि भारत के अधिकांश कृषि कर्म में संलग्न मजदूर, जनता और सर्वहारा वर्ग आर्थिक विपन्नता से आक्रान्त हैं। इस विपन्नता से छुटकारा दिलाने के लिए कवि ने देशवासियों, सत्तासीनों तथा देश के कर्णधारों का ध्यान अपने गीतियों के माध्यम से आकृष्ट किया है।

इस प्रसंग में कुल मिलाकर मैं इस पड़ाव पर पहुँचती हूँ कि अमोल बटरोही ग्रामीण जीवन के वास्तविक स्वरूप को लोगों के समक्ष उपस्थित करते हैं। उनकी स्फुट रचनाएँ भी 'बघेलखण्ड' के ग्रामीण जन जीवन के अन्तर्मन से मिश्रित लगती हैं। वे यह बात स्वीकार करते हैं कि ग्रामीण एवं पारिवारिक जीवन की छबियाँ प्रकट करना मेरे जीवन संग्राम की भाषा है तथा मेरी रचनात्मक प्रयोजनीयता भी है।

डॉ. अमोल बटरोही के काव्य में नारी जीवन की विविध स्थितियाँ बड़े ही मनोहारी ढंग से प्रस्तुत हैं। सभी के उदाहरण इसमें भले ही प्रस्तुत किये न जा सके हों, किन्तु मैं इतना अवश्य कह सकती हूँ कि अमोल बटरोही जी की रचनाओं में जिन नारी विषयक निजत्व का भाव बोध व्यक्त हुआ है, वह अन्यत्र देखने को नहीं मिलता।

सन्दर्भ

1. वयं रक्षामः : पृष्ठ 84, आचार्य चतुरसेन शास्त्री.
2. The Imperial Gazettear Vol. vi, P. 358.
3. भारत सावित्री, भाग–2, पृष्ठ 145.
4. हिमालय केरि कनियाँ–हरबाह, पृष्ठ 8, डॉ. अमोल बटरोही.
5. हम बोलब–कसो! को मानी? पृष्ठ 11, डॉ. अमोल बटरोही.
6. विन्ध्य का आंचलिक साहित्य और प्रमुख साहित्यकार, पृष्ठ 172, डॉ. रामलला शर्मा.

7. हम बोलब–का कुछु बोलेन अपना, पृष्ठ 65–66, डॉ. अमोल बटरोही.
8. विन्ध्य का आंचलिक साहित्य और प्रमुख साहित्यकार, पृष्ठ 152–153, रामलला शर्मा.
9. हिमालय केरि कनिया–आपन गाँउं, पृष्ठ 4, डॉ. अमोल बटरोही.
10. बघेली भाषा एवं साहित्य, पृष्ठ 136, डॉ. प्रतिभा चतुर्वेदी.
11. विन्ध्य का आंचलिक साहित्य और प्रमुख साहित्यकार, पृष्ठ 182, रामलला शर्मा.